Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2020 GISRRJ | Volume 3 | Issue 6 | ISSN : 2582-0095

भ्रष्टाचार और लोकपाल

डॉ. पूनम सिंह
नेट पी–एच.डी. राजनीतिशास्त्र

Article Info
Volume 3 Issue 6
Page Number : 198-204

Publication Issue :
November-December-2020

Article History
Accepted : 01 Dec 2020
Published : 25 Dec 2020

भ्रष्टाचार वर्तमान राजनीति की विश्वव्यापी समस्या बन चुकी है, यह एक ऐसा रोड है, खासतौर से भारत में लोकतान्त्रिक शासन व्यवस्था की नींव हिला दिया है। ये प्रशासन, विकास तथा लोकतन्त्र का परिहास है। ट्रान्सपेरेंसी इण्टरनेशनल नाम संस्था की ओर से एक बार फिर यह उजागर किया गया कि भारत भ्रष्ट देशों की सूची मे शीर्ष पर बना हुआ है। भ्रष्टाचार के मामले में भारत जिन देशों के साथ है, उनमें अफगानिस्तान, नाईजीरिया, युगांडा सरीखे देश है जो अलोकतान्त्रिक रूप से प्रसिद्व है। ऐसे देशों के साथ भारत की गिनती होना, विश्व की सबसे सफलतम् लोकतन्त्र की साख गिरना है। इस संस्था के अनुसार भारत लगभग हर दूसरा व्यक्ति अपना काम कराने के लिए रिश्वत देने को विवश है। हालांकि यह माना जाता है कि इस तरह हर स्तर पर व्याप्त भ्रष्टाचार विकास विरोधी है। लेकिन वर्तमान सरकार इस पर कोई कार्यवाही करती हुई नजर नही आ रही है। इसकी ओर पूरा देश अन्ना के नतृत्व में वर्षो से लम्बित लोकपाल विधेयक पारित कराने के लिए आन्दोलित था, लेकिन इसे भी ठण्डे बस्ते में राजनीतिक दलों ने डाल दिया।

आज संविधान के वायदों और निहितार्थो तथा प्रजातन्त्र की वास्तविकताओं तथा व्यवहार में जो अन्तर भयावह रूप से हर भारतीयों के सामने आकर खडा हो गया है, उससे अब और आंख बंद करना देश के लिए घातक है। जब देश का हाइप्रोफाइल घोटाले–बोर्फोस घोटाला (1986) झारखण्ड मुक्ति मोर्चो सांसद खरीद काण्ड (जुलाई 1993), टांसी भुमि घोटाला (1992), सुखराम (आय से अधिक सम्पत्ति का मामला), चारा घोटाला (1991), लालू–राबडी देवी (आय से अधिक सम्पत्ति का मामला (1996), पेट्रोल पम्प आवंटन घोटाला, 2004 वी जार्ज–सोनिया गांधी के निजी सचिव (दिसम्बर 2003), जैन हवाला काण्ड, राष्ट्रमण्डल खेल घोटाला, आदर्श सोसाइटी, टेलीकॉम घोटाले पर सारा ध्यान केन्द्रित करता है, तब वास्तविक राष्ट्रीय प्राथमिकताऐं कही दूर पीछे छूट जाती है। वास्तव में केन्द्र सरकार व राज्य सरकार की प्राथमिकताओं में क्या हैः 60 प्रतिशत युवा विदेश जाकर शिक्षा प्राप्त करना चाहते है। विदेशी विश्वविद्यालयों को भारत में आने के आमंत्रण दिये जा रहे हैं। विदेशी विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों की स्थिति में सुधार की केवल घोषणायें होती है, यह संस्थाए मात्र डिग्री प्रदत्त संस्था

Copyright : © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

बनकर रह गई है। 15–20 प्रतिशत भारतीयों, बच्चों तथा युवाओं के लिए 'इण्डिया शाईनिंग, इमाजिंग इण्डिया, इकनामिक पावर इण्डिया, जैसे जुमले सार्थक है, बाकी के लिए योजनाएं घोषणाएं तथा वायदे है। इस स्थिति का घोटालों, भ्रष्टाचार तथा कदाचार से कितना सम्बन्ध है या नही है, इस पर चर्चा देशभर में आवश्यक है। यह भी चर्चा होनी चाहिए कि क्या सत्ता में बने रहने के लिए प्रजातन्त्र के नाम पर सिद्धान्तों, मूल्यों तथा सामान्यजन की अपेक्षाओं को नजरअंदाज करना स्वीकार्य हो सकता हैघ् पिछले दशकों मे ंजो कुछ हुआ है, उसका प्रभाव कहां–कहां नही पड़ा हैघ् उसका प्रभाग व्यवस्था के हर अंग पर पड़ा है, हर व्यक्ति पर पड़ा है, और इससे भी ज्यादा प्रभाव स्कलों, कालेजों तथा विश्वविद्यालयों में बच्चों तथा युवाओं पर पड़ा है वहां की कार्य संस्कृतियां बदल गई है ये संस्थान लुटेरों का संस्थान बनकर रह गया है।

वर्तमान शासन व्यवस्था में नही लग रहा है कि भ्रष्टाचार नियन्त्रित हो पाएगा क्योंकि राजनीतिक दलों को एक दूसरे के ऊपर कीचड़ उछालने में लगे हैं। यहां तक कि समसामायिक प्रधानमंत्री भी कहते हैं कि भ्रष्टाचार को बिल्कुल बर्दाश्त नही किया जाएगा, परन्तु वास्तविकता यह है कि शायद हमने भ्रष्टाचारियों को नब्बे प्रतिशत लूटने की छूट दे दी है इसीलिए करोंड़ो के घोटालों का नाम तक नहीं लिया जाता है और छोटे चूहों को पकड़ लिया जाता है। राज्य सरकारों ने प्रदेश स्तर पर भ्रष्टाचार से लड़ने की एजेंसिंयों को पंगु बना दिया है। उत्तर प्रदेश में एक समय था कि सीआईडी को कोई अभियोग सौंपे जाने पर समझाा जाता था कि अब अपराधी की खैर नही, लेकिन वर्तमान में जब केस सी आईडी को दिया जाता है तो यह मान लिया जाता है कि अपराधी बच जाएगा। यही हाल केन्द्रीय जांच एजेंसियों का भी है।

भारतीय आर्थिक व्यवस्था में काले धन की रकम बराबर बढ़ती जा रही है। स्विट्जरलैंड से मिले आंकड़ों के अनुसार भारत के 66 हजार अरब रूपये विश्व बैंकों में जमा है। यह रकम विश्व के अन्य सभी देशों के काले धन से ज्यादा है और भारत पर कुल विदेशी कर्ज का तेरह गुना है। यह काला धन मुख्य रूप से भ्रष्ट राजनीतिज्ञों, अधिकारियों और उद्योगपतियों का है। अनुमान है कि यदि यह धन भारत वापस लाया जाए और उसका सदुपयोग होती देश की काया पलट हो सकती है और विदेशों का सारा कर्ज भी उतर जाएगा। इसी संदर्भ मे गलोबल फाईनेंशियल इंटीग्रिटी ने भी एक रिर्पोट प्रकाशित की है, जिसके अनुसार 1948 से 2008 की अवधि में देश का 9.6 लाख करोड़ रूपये अवैध तरीके से विदेशों में भेजा गया।

यहीं नहीं 'भारतीय लोकतान्त्रिक प्रक्रिया में धन बल की भूमिका बढ़ गई है। जिसकों तक संगत बनाने के होड़ में हमारे राजनीतिक दल लगे हुए है। इससे भी ज्यादा आश्चर्यजनक तथ्य लोकसभा चुनाव 2009 में 6,753 प्रत्याशियों के हलफनामों का विश्लेषण एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफॉर्म्स और नेशनल इलेक्टशन वॉच ने किया है। लोकसथा के सारे प्रत्याशियों में से केवल चार प्रत्याशी ही यह घोषणा करते हुए बताया है कि उन्होंने निर्धारित सीमा से ज्यादा खर्च किया केवल 30 लोगों ने यह घोषणा किया कि उन्होंने तय सीमा का करीब 90–95 खर्च किया। जबकि कुल 6,753 में से 6,719 यानी 99.5 प्रतिशत ने घोषणा करते हुए कहा कि उन्होंने केवल तय सीमा का 40–50 प्रतिशत खर्च किया है। 2009 लोकसभा चुनाव में खर्च की तय सीमा 16 लाख थी, जबकि भारतीय राजनीतिक दल तय सीमा को बढ़ाने की मांग कर रहे थे। जिसे बढ़ाकर 25 लाख कर दी गई है, फिर भी राजनितिक दलों के लिए कम पड़ रहा है। अब तो यह माना जा रहा है कि जिस प्रत्याशी के पास जितना धन होगा वही चुनाव जीत सकता है जिसका आंकलन हम नीचे दी गयी सारणी से कर सकते है।

सम्पत्ति	उम्मीदवरों की संख्या	सांसदों की संख्या	विजयी सांसदों का प्रतिशत
अत्यधिक (पांच करोड़ से या अधिक)	343	112	32.65
अधिक 50 लाख से पांच करोड़)	343 1592	112 294	32.65 19.47
कम (10 लाख से कम)	3964	17	0.34

इसके अलावार इन विजयी सांसदों के सम्पत्तियों का 2004 और 2009 के चुनाव में पहुॅचे सासदों को आंकलन करें तो 543 सांसदों में से 315 करोड़पति है जो 2004 के लोकसभा चुनाव जीतने वाले करोड़पति उम्मीदवरों की संख्या में 102 प्रतिशत वृद्धि के बराबर है जबकि इस चुनाव में कराड़पति सांसदों की संख्या 156 थी।

यह एक विचित्र स्थिति है कि हम लोग अपने को लोकतान्त्रिक देश कहते है, जो कि ऐसे राजनीतिक दलों द्वारा चलाया जा रहा है जिनकी आंतरिक कार्यप्रणाली आनुवांशिक और पूर्णरूप से अलोकतान्त्रिक है। यही कारण है कि राजनीतिक प्रक्रिया में धनबल का प्रभाव बढ़ा है। ऐसी स्थिति में भ्रष्टाचार के विषबेल को रोकने में हमारी लोकतान्त्रिक प्रक्रिया भी असमर्थ है। यहां तक कि भ्रष्टाचार में व्यापक भागीदारी वाले मंत्री और नौकरशाह कभी भी स्वैच्छिक रूप से किसी भी ऐसे कानून को नही बनायेगें जिससे उन पर ही फंदा कस जाये। इसलिए हम लोगों को भ्रष्टाचार को समूल खत्म करने के लिए लम्बे और कड़े संघर्ष के लिए तैयार होना पड़ेगा। कुछ हद तक मीडिया की कार्यप्रणाली में ईमानदारी की ही देन है कि भ्रष्टाचार के मामलों के सबूतों को जनता के समक्ष लाया है जिस पर कार्यवाही हेतु सरकार को मजबूर होना पड़ा।

इसी तरह भ्रष्टाचार के विरूद्ध आम नागरिकों को समूह भी आन्दोलित हुआ इस तरह के प्रेरणा अन्ना हजारे, अरविन्द केजरीवाल, शांति भूषण, बाबा रामदेव, स्वामी अग्निवेश, श्री श्री रविशंकर और अन्य ख्याति प्राप्त लोग है। कानून विशेषज्ञों के समूह ने जन लोकपाल नामक एक ऐसे विधेयक को तैयार किया है जो वर्तमान तंत्र की सभी खामियों से निपटने की क्षमतावाला एक प्रभावकारी कानून है। इस कानून में मुकदमा चलाने, सजा देने, भ्रष्टाचार से कमायी गई दौलत की रिकवरी करने, विसलब्ओअर्स की सुरक्षा करने, मामलों की त्वरित सुनवायी और मंत्री से संतरी या किसी को भी न बक्शने जैसे असरदार प्रावधान किए गए है।

महाराष्ट्र के गांधी की उपमा से प्रसिद्ध अन्ना हजारे को भी आमरण–अनशन करने पर मजबूर होना पड़ा। आज उन्हीं की देन है कि भारत की सोयी हुई जनता जाग गई है। सरकार भी अपनी तैयार की गई दन्त विहीन लोकपाल विधेयक रोकने मजबूर हुई। इस लोकपाल विधेयक में न हो रकम की रिकवरी का प्रावधान है और न ही प्रधानमंत्री को इसके दायरे में रखा गया है। लोकसभा के स्पीकर या राज्यसभा के चैयरमैन की अनुमति के बिना किसी भी शिकायत की जांच नही जा सकती है। इसका सीधा–सा तात्पर्य है कि भ्रष्टाचार से लड़ाई में कमी है। जिसको देर किया जाना चाहिये और अन्ना हजारे की अगुआई में 'इण्डिया अंगेस्ट करप्शन आदोलन लगाकर जांच कमेटी बनाकर जांच के घेरे में लगा दी है। एक तरह से आन्दोलन से कमजोर करने में जो शोर से प्रयास किया है।

फिर भी जनांदोलन के कारण एक सशक्त लोकपाल बिल लाने की कोशिश की, लेकिन राजनीतिक दलों ने ऐसी चाल कि लोकपाल विधेयक दोनों सदनों से पारित नही हो पाया। लोकपाल

बिल के जिन मुद्दों पर दोनों पक्षों में विरोधाभास था उनमें एक लोकायुक्त सम्बन्धी प्रावधान था और दूसरा सीबीआई की स्वायत्तता का। एक अन्य अहम् मुद्दा लोकपाल के चयन और हटाने के अधिकार को लेकर था। लोकायुक्त के प्रावधान का कांग्रेस और राष्टवादी कांग्रेस पार्टी को छोड़कर शेष सभी दल एकजुट होकर विरोध कर रहे थे। सत्ता पक्ष इस प्रावधान को संसद की ओर से सर्वसम्मति से पारित प्रस्ताव की भावना के अनुरूप बता रहा था वही विपक्ष एवं सरकार के सहयोगी दल उसे राज्यों के अधिकारों पर अतिक्रमण और साथ ही संघीय ढांचे पर प्रहार करने वाला बता रहे थे। विपक्षी दलों की आपत्ति के कुछ तकनीकी आधार हो सकते हैं, लोकिन यह समझना कठिन है कि वे लोकपाल जैसा कानून राज्यों में क्यों नही चाह रहेः आखिर इसका क्या मतलब है कि संघीय ढांचे की दुहाई देकर रानीति और सरकारी मशीनरी में व्याप्त भ्रष्टाचार दूर करने वाली व्यवस्था केन्द्र में अलग तरीके से बने और राज्यों में अलग तरीके सेः क्या राज्यों का भ्रष्टाचार केन्द्र के भ्रष्टाचार से अलग हैः आम जनता ने अन्ना हजारे के नेतृत्व में लोकपाल व्यवस्था बनाने का जो दबाव सरकार पर बनाया उसी का परिणाम था कि राज्यों में लोकायुक्त की नियुक्ति पर लोकसभा में सहमति बन पाई, लेकिन अन्य मुद्दों पर कोई हल नही निकल सका जिससे जनता यह मानने के लिए बाध्य हुई कि राजनीतिक दल लोकपाल संस्था का निर्माण नही होने देना चाहते। कुछ राजनीतिक दलों ने तो साफ–साफ कहा भी कि ऐसी किसी व्यवस्था की जरूरत ही नहीं है, यह हमारे गले का फंदा है। इन वक्तव्यों से यह लगता है कि राजनीतिक दल भ्रष्टाचार को दूर करने के लिए तैयार नही और वे अपनी राजनीति के साथ–साथ सरकारी मशीनरी को भी भ्रष्टाचार के साथ ही चलाना चाहते है।

जैसाकि मोरारजी देसाई की अध्यक्षता में पांच जनवरी 1966 को प्रशासकीय सुधार आयोग का गठन किया गया। इस आयोग ने अपनी सिफारिशों में एक द्विस्तरीय प्रणाली के गठन की वकालत की। जिसके तहत केन्द्र में एक लोकपाल (न्यूजीलैण्ड में संसदीय आयुक्त की तर्ज पर) और राज्यों में लोकायुक्तों की स्थापना था। जिसे सरकार पहल बार 1968 में संसद में पेश किया, लोकसभा से पारित हो गया, लेकिन राज्यसभा से पारित न हो सका। फिर इस विधेयक को 1971, 1985, 1989, 1996, 1998, 2001, 2005 और हाल ही में 2008 में संसद मे पेश किया गया, लेकिन हर बार इसे किसी न किसी वजह से चलते पास नहीं हो पा रहा है। लेकिन प्रदेश के कई प्रदेशों ने अलग–अलग साल में अपने लोकायुक्त संस्थाओं का गठन कर लिए है। जिसमें उड़ीसा पहला राज्य है, जहां 1970 में विधेयक आकर 1972 में गठन किया उसके बाद महाराष्ट्र (1972), बिहार (1974), उत्तर प्रदेश

(1977), मध्यप्रदेश (1981), आन्ध्रप्रदेश (1983), हिमाचल प्रदेश (1983) कनार्टक (1984), असम (1986), गुजरात (1988), दिल्ली (1995), पंजाब (1996), केरल (1998), छत्तीसगढ़ (2002), उत्तराखण्ड (2002), पाश्चिम बंगाल (2003) और हरियाणा ने (2004) में गठन किया।

प्रदेशों में गठित लोकायुक्तों की संरचना और अधिकार क्षेत्र समान नही है। कुछ राज्यों ने लोकायुक्त के अधीन एक उप–लोकायुक्त नियुक्त कर रखा है। कुछ राज्यों में लोकायुक्त के पास स्वतः संज्ञान लेते हुए किसी मामले की जांच का अधिकारी नही है। एक तरह से दन्तविहीन लोकायुक्तों की नियुक्ति किए हुए। वास्तव में लोकपाल की पूरी बहस के केन्द्र में दो बाते हैं। पहली व्यापक तौर पर फैला 'भ्रष्टाचार और दूसरी, लोगों का गुस्सा, जो शासन व्यवस्था की उदासीनता से उपजी है, दरअसल सूचना के अधिकार ने लोगों की लोकतान्त्रिक इच्छाशक्ति को जगाया और लोगों ने जानकारियां जुटाई। इस बीच कई गड़बड़ियों, खामियों और उदारीकरण के दो परिणाम निकलते है। जिसमें पहला, पैसा कमाना सबसे महत्वपूर्ण हो गया और दूसरा घोटालों की संख्या व उसकी राशि में अपूर्ण बढ़ोत्तरी हुई

भारत में भ्रष्टाचार के मामलों की स्वतंत्र जांच अभी बहुत दूर की बात है क्योंकि 42 सालों से लम्बित लोकपाल विधेयक 11वीं बार राजनीतिक भेंट चढ़ चुका है। वोट बैंक के निहित स्वार्थों के कारण विभिन्न राजनीतिक दलों ने राज्य सभा में एक दूसरे पर कीचड़ उछालकर टांग खिचायी करके बिल को पास नही होने दिया। यहां तक कि लोकपाल में आरक्षण की मांग जानबूझकर किया गया। अगर पास भी हो जाए तो अदालत की मांग रखी गई, जिसकी रोजगार या शेक्षणिक अवसरों के सृजन में कोई भूमिका ही नहीं है। यदि लोकपाल में आरक्षण दिया जाता है तो फिर चुनाव आयोग, केन्द्रीय व राज्य सतर्कता आयोग आदि में भी आरक्षण दिया जाना चाहिए। इसके बाद विधायिका और न्यायपालिका का बारी रहेगा। इससे भी महत्वपूर्ण मुद्दा अगर लोकपाल में अल्पसंख्यक कोटा रखा जाता है तो फिर जिन संस्थानों में अनुसूचित जाति/जनजाति और ओबीसी कोटा है, उनमें भी अल्पसंख्यक कोटा देना होगा। इससे समस्या का निपटारा न होकर बल्कि और समस्यायें बढ़ेगी। भ्रष्टाचार से निपटने का कोई सुनिश्चित फार्मूला नही है फिर भी एक विस्तरीय रणनीति से इस पर अंकुश जरूर लगाया जा सकता है। इसके तहत् भ्रष्टाचार के दोषियों के खिलाफ कड़े दण्ड का प्रावधान, भ्रष्टाचार होने से पहले इसकी रोकथाम के उपाय करना और भ्रष्टाचार से निपटने के तरीकों के बारे में जागरूकता को बढ़ावा देना शामिल है। वर्तमान में एक सश्क्त लोकपाल पारित करवाने के

लिए देश में अन्ना, श्री श्री रविशंकर व बाबा रामदेव तीनों महाशक्तियां लगी है। लगातार जनता को जागरूक कर रहे थे, मगर दुर्भाग्य है आज तक लोकपाल नही लाया जा सका है यद्यपि सत्ता परिवर्तन अवश्य हो गया।

संदर्भ सूची

1. दैनिक जागरण, सोमवार 13 दिसम्बर 2010, जगमोहन सिंह राजपूत 'एक ऐतिहासिक अवसर' पृ. सं. 09

2. दैनिक जागरण, शनिवार 27 नवम्बर 2010, प्रकाश सिंह 'भ्रष्ट भारत का भविष्य', पृ. सं. 09

3. दैनिक जागरण, शनिवार 3 अप्रैल 2010, मुद्दा, पृ. सं. 11

4. हिन्दुस्तान, गोरखपुर, शुक्रवार 22 दिसम्बर 2011 पृ. सं. 12

5. द संडे इण्डियन (समाचार पत्रिका) 18 नवम्बर 2011 पृ. सं. 35

6. आउट लुक जनवरी 2012, पृ. सं. 23

7. दैनिक जागरण 7 जनवरी 2012, पृ. सं. 09